जनसत्ता

15 जून, 2019

आतंक के खिलाफ

किर्गिस्तान की राजधानी बिश्केक में चल रहे शंघाई सहयोग संगठन (एससीओ) के सम्मेलन से भारत ने आतंकवाद के खिलाफ जो आवाज बुलंद की है, उसका संदेश साफ है कि अब और आतंकवाद बर्दाश्त नहीं किया जाएगा। भारत का यह संदेश पड़ोसी देश पाकिस्तान को खुली चेतावनी है। एनडीए सरकार के लगातार दूसरी बार सत्ता में आने के बाद यह पहला मौका है जब प्रधानमंत्री ने एक बड़े अंतरराष्ट्रीय मंच से पाकिस्तान को चेताया है। इतना ही नहीं, भारत ने पाकिस्तान की हिमायत करने वाले और उसके मददगार चीन को भी दो-टूक कह दिया है कि पाकिस्तान सुधर नहीं रहा है और उसकी आंतकी गतिविधियां जारी हैं। सम्मेलन से इतर भारत के प्रधानमंत्री की चीन और रूस के राष्ट्रपतियों के साथ अलग-अलग मुलाकात भी हुई। यह एससीओ में भारत की बढ़ती हैसियत को बताता है। एससीओ की बैठक में पाकिस्तान के प्रधानमंत्री इमरान खान से कोई बातचीत या मुलाकात नहीं करने का फैसला भारत के कड़े रुख को दिखाता है।

बिश्केक सम्मेलन में भारत का प्रमुख एजेंडा ही आतंकवाद के खिलाफ आवाज उठाना है। यों भारत पहले भी वैश्विक मंचों से आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई की बात कहने के साथ-साथ इस मसले पर वैश्विक सम्मेलन की बुलाने की मांग करता रहा है। लेकिन इस मामले में कई राष्ट्रों के दोहरे व्यवहार के कारण ठोस नतीजे देखने को नहीं मिले। इसीलिए एससीओ की इस बैठक से इतर चीन के राष्ट्रपति से मुलाकात में भारत ने इस बात के लिए दबाव डाला है कि वे पाकिस्तान को समझाएं कि वह भारत के खिलाफ आतंकवादी गतिविधियों को शह देना बंद करे। भारत को चीन से यह उम्मीद इसलिए भी बंधी है कि उसने इस बार जैश-ए-मोहम्मद के सरगना मौलाना मसूद अजहर के मामले में अपना रुख बदला, जिसकी वजह से संयुक्त राष्ट्र मसूद अजहर को अंतरराष्ट्रीय आतंकवादी घोषित कर पाया। इससे पहले चीन उसे आतंकवादी मानने तक को तैयार नहीं हो रहा था। अगर सीमा विवाद को छोड़ दें तो चीन के लिए भारत अपरिहार्य है, खासतौर से भारत का विशालकाय बाजार। इसके अलावा, चीन भारत के साथ अच्छे रिश्तों की दुहाई देकर अमेरिका से भी संतुलन साधने की रणनीति पर चल रहा है। यानी चीन के लिए यह परीक्षा की घड़ी है कि वह आतंकवाद के मुद्दे पर भारत का कितना साथ देता है और पाकिस्तान के प्रति रुख में क्या बदलाव लाता है।

सवाल है जो देश आतंकवाद को अपना स्थायी कारोबार बना बैठे हैं, उनसे कैसे निपटा जाए? इस काम में एससीओ के सदस्य देश, खासतौर से चीन और रूस, भारत का कितना और कैसे समर्थन करते हैं और पाकिस्तान पर आतंकी संगठनों के खिलाफ कार्रवाई के दबाव बना पाते हैं, यह देखने की बात होगी। पिछले कुछ समय में रूस की भी पाकिस्तान के साथ नजदीकियां बढ़ी हैं। खासतौर से रक्षा क्षेत्र में सहयोग को लेकर। चीन तो पाकिस्तान का खुला दोस्त है ही। हालांकि भारत के सख्त रुख को देखते हुए पाकिस्तान पर दबाव बना है और उसका असर भी दिखा है। पाकिस्तान के प्रधानमंत्री ने बातचीत शुरू करने के लिए भारत को दो बार पत्र भी लिखे। लेकिन भारत की सबसे बड़ी और पहली शर्त यही है कि पाकिस्तान पहले आतंकवाद को शह देना बंद करे। इमरान खान ने खुद माना है कि इस वक्त भारत और पाकिस्तान के रिश्ते न्यूनतम स्तर पर हैं। पुलवामा कांड के बाद भारत ने पाकिस्तान से सारे संवाद बंद कर दिए हैं। पाकिस्तान और उसके हमदर्दों को भारत के इस कड़े रुख का मतलब समझना चाहिए।

हौसले की उड़ान

यों भारत में विज्ञान की दुनिया में काम कर रहे हमारे वैज्ञानिकों की कामयाबियों की एक लंबी श्रृंखला है और वे लगातार इस क्षेत्र में नए और चुनौतीपूर्ण काम को पूरा करके अपनी क्षमताएं साबित करते रहे हैं। मगर अंतरिक्ष में अपने अभियानों को नई उड़ान देने की जो ताजा घोषणा हुई है, वह जमीन पर उतरने के बाद आने वाले वक्त में भारत की वैज्ञानिक उपलब्धियों में नया और शानदार अध्याय जोड़ेगी। दरअसल, गुरुवार को इसरो के प्रमुख के. सिवन ने इस योजना के बारे में बताया कि अगले पांच-सात सालों में भारत अंतरिक्ष में अपना एक स्टेशन बना लेगा। आजादी के बाद से अब तक चांद पर अपना यात्री भेजने से लेकर मंगलयान और चंद्रयान जैसे तमाम अभियानों में निश्चित रूप से भारत ने यह साबित किया है कि अंतरिक्ष में उसके प्रयोग और कौशल की गुणवत्ता अंतरराष्ट्रीय मानकों के समांतर खड़ी है। लेकिन अब इससे आगे अंतरिक्ष में अपना स्टेशन बनाने की ओर कदम बढ़ा कर उसने यह भी संकेत दे दिया है कि इस क्षेत्र में भारत अब अमेरिका, रूस और चीन जैसी महाशक्ति के समकक्ष होने के लिए तैयार है।

फिलहाल अंतरिक्ष में कुल दो स्टेशन काम कर रहे हैं, जिसमें एक अमेरिका, रूस, यूरोपीय संघ और जापान के आपसी सहयोग के साथ चल रहा आइएसएस यानी अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन है और दूसरा है तिआनगोंग-2, जो अकेले चीन का है। हालांकि चीन का तिआनगोंग-2 आइएसएस से काफी छोटा है, लेकिन इससे इतना तो साफ है ही कि छोटे से शुरुआत करके बड़ी कामयाबी हासिल की जा सकती है। अपनी इसी क्षमता के बूते चीन यह कह सकने की स्थिति में है कि अंतरिक्ष में उसका अपना स्टेशन है। इसी तर्ज पर इसरो प्रमुख के. सिवन ने कहा कि हम भी अभी एक छोटे मॉड्यूल का ही प्रक्षेपण करेंगे, लेकिन हमारी यह महत्त्वाकांक्षा है कि हमारा अपना एक अंतरिक्ष स्टेशन हो; कोई भी छोटे से शुरू करके ही बाद में उसे विस्तार देता है। आकार और क्षमता में भारत का स्टेशन जो भी होगा, मगर वह भारत का अपना होगा और वह आइएसएस का हिस्सा नहीं होगा। एक तरह से गगनयान अभियान का ही विस्तार होगा, जिसके तहत भारत अंतरिक्ष में मानवयुक्त मिशन भेजने की योजना पर काम कर रहा है। इस बड़ी और महत्त्वाकांक्षी योजना के मूर्त रूप लेने के बाद देश अब ज्यादा संख्या में मानव मिशन अंतरिक्ष में भेज सकेगा।

जाहिर है, यह कदम बढ़ाने का हौसला है और यह बना रहा तो इसमें कोई शक नहीं कि कुछ सालों बाद हम अंतरिक्ष में स्टेशन कायम करने वाले विकसित देशों के बराबर खड़े होंगे। इसका सबसे बड़ा फायदा यह होने वाला है कि भारत भी अपने स्टेशन के जरिए न केवल अंतरिक्ष में होने वाले प्रयोग, अध्ययन और निष्कर्षों के बूते अपने भविष्य की कार्य-योजना बनाएगा, बल्कि पृथ्वी पर नजर रखने के क्रम में दुश्मन देशों की गतिविधियों की निगरानी भी कर सकेगा। हालांकि अंतरिक्ष में बाकी गतिविधियों और प्रयोग के स्तर पर इसरो ने अंतरराष्ट्रीय स्तर के मानकों पर खुद को खरा साबित किया है और अलग-अलग स्वरूप और जरूरत वाले यानों के कामयाब प्रक्षेपण से अपनी वैज्ञानिक क्षमताओं को साबित किया है। हाल के वर्षों में इसरो की व्यावसायिक शाखा ने ध्रुवीय उपग्रह प्रक्षेपण यान के जरिए कई देशों के दर्जनों उपग्रह प्रक्षेपित किए हैं और इस क्षेत्र में दुनिया का ध्यान अपनी ओर खींचा है। इसलिए अंतरिक्ष में अपने स्टेशन की महत्त्वाकांक्षा की ओर बढ़ते कदम को वैज्ञानिक कामयाबियों के उसी सफर के अगले पड़ाव के रूप में देखा जा सकता है।

कल्पमेधा

नशा तात्कालिक आत्महत्या है। उसका सुख सिर्फ नकारात्मक है, दुख का क्षण भर भूलना।
– बर्ट्रेंड रसेल

बढ़ती झुग्गियां, गहराते सवाल

प्रदीप श्रीवास्तव

शहरी क्षेत्रों में बढ़ती आबादी स्थानीय प्रशासन द्वारा बुनियादी सेवाएं प्रदान करने की क्षमता पर भारी दबाव डालती है। वैध-अवैध रूप से बसने वाली ये बस्तियां शहरों का अविभाज्य हिस्सा बन चुकी हैं। लेकिन हालत यह है कि इनमें रहने वाले लोगों को पेयजल, शौचालय और कचरे के निपटान जैसी बुनियादी सुविधाएं तक नहीं नसीब हैं।

वैश्विक स्तर पर शहरीकरण तेजी से बढ़ रहा है। संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट के अनुसार 2030 तक विश्व की जनसंख्या करीब दो अरब के आसपास हो जाएगी। शहरीकरण का सबसे अधिक असर एशिया और अफ्रीका के देशों में हो रहा है। इन दोनों महाद्वीपों की बुनियादी व्यवस्था नब्बे फीसद शहरीकरण के कारण प्रभावित हो रही है। जबकि, यूरोप व अमेरिका आदि के देशों में शहरीकरण थम-सा गया है। 2030 तक भारत में चालीस करोड़ से अधिक लोग शहरों में बसे होंगे, जो शहरीकरण की नई-नई समस्याओं को जन्म देंगे। मौजूदा समय में शहरों में बसे प्रत्येक छह परिवारों में से एक परिवार गंदी बस्तियों में रहता है और आने वाले वर्षों में यह संख्या बढ़ने का अनुमान है। भले ही आर्थिक प्रगति अंकों के हिसाब से प्रभावशाली दिख रही हो, लेकिन भारत में गैरबराबरी अब भी विकास की दिशा में सबसे बड़ी चुनौती है। विश्व स्तर पर सतत विकास लक्ष्य (एसडीजी) को हासिल करने के लिए शहरी गरीबों के हालात बदलने की जरूरत है।

शहरी क्षेत्रों में रोजगार की संभावनाएं अधिक होती हैं, इसलिए वहां ज्यादा लोग रोजगार की तलाश में गांवों या छोटे शहरों से पलायन करके आते हैं। यहां आकर वे ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में अधिक धन कमाते हैं और राष्ट्रीय आय में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। भारत में विगत दशकों में पलायन की दर विश्व की तुलना में बढ़ी है। शहरी क्षेत्रों में प्रवासियों का अनुपात आसमान छूने लगा है। आवास और शहरी गरीबी उन्मूलन मंत्रालय की रिपोर्ट के अनुसार 1983 में शहरी क्षेत्रों में प्रवासियों का अनुपात 31.6 फीसद था, जो 2007-08 में बढ़ कर 35.4 फीसद हो गया। यह मामूली वृद्धि है, लेकिन यह अभी भी आबादी का एक तिहाई से अधिक है। अगले कुछ दशकों में इस प्रक्रिया में तेजी आएगी। आंकड़ों के हिसाब से 2001 तक भारत की आबादी का 27.81 फीसद हिस्सा शहरों में रहता था। 2011 तक यह 31.16 फीसद और 2018 में 33.6 फीसद हो गया। वहीं, 2001 की जनगणना में शहरों और कस्बों की कुल संख्या 5161 थी, जो 2011 में बढ़ कर 7936 हो गई। यानी शहरों का विस्तार तेजी होता जा रहा है। इसका नतीजा यह हुआ कि झुग्गी बस्तियों में रहने वालों की संख्या भी तेजी से बढ़ रही है। भारत का छोटा-बड़ा शायद ही कोई ऐसा शहर हो जहां ये बस्तियां न हों। बड़े शहरों और महानगरों में तो झुग्गी बस्तियों के क्षेत्रफल तेजी से बढ़ रहे हैं। आज हर तीन भारतीयों में से एक शहरों और कस्बों में रहने लगा है। संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट के अनुसार, वर्तमान में विश्व की आधी आबादी शहरों में रहने लगी है और 2050 तक भारत की आधी आबादी महानगरों और शहरों में रहने लगेगी। एक अनुमान है कि 2025 तक विकासशील देशों में शहरी आबादी में तीन गुना वृद्धि हो चुकी होगी और यह कुल जनसंख्या के इतसठ फीसद के बराबर हो जाएगी।

सरकार ने गरीबों के लिए, खासतौर से शहरी गरीबों के लिए आवास योजना, अटल नवीकरण और शहरी परिवर्तन मिशन (अमृत), स्मार्ट सिटी मिशन, डिजिटल इंडिया, जनधन योजना और मेक इन इंडिया आदि सहित कई योजनाएं शुरू हैं। स्थानीय जिला प्रशासन की इकाइयां भी कई तरह की योजनाओं को संचालित करती हैं, जिससे शहरी गरीबों खासतौर पर झुग्गी बस्तियों में रहने वाले गरीबों को बुनियादी सार्वजनिक सेवाएं, जैसे पानी, साफ-सफाई, स्वास्थ्य और शिक्षा आदि उपलब्ध हो सके। लेकिन बढ़ती हुई शहरी आबादी को देखते हुए अभी भी सरकार को पानी, साफ हवा, सीवर व्यवस्था, स्वास्थ्य सेवाएं, शिक्षा, रोजगार के अवसर आदि उपलब्ध कराने में अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। पर्यावरण की सुरक्षा भी शहरों के लिए एक बड़ी चुनौती बनती जा रही है, क्योंकि शहरों के विकास के लिए सबसे ज्यादा बलि हरित क्षेत्र की ही चढ़ाई जाती है।

आज हालत यह है कि देश के सभी बड़े शहरों और महानगरों में बड़ी संख्या में झुग्गी बस्तियां हैं। इनमें रहने वाले लोग शहरी जनसंख्या से संबंधित उच्च एवं मध्य वर्ग की अनेक आवश्यकताओं को पूरा करते हैं, परंतु वे खुद न केवल गरीबी के शिकार हैं, बल्कि बुनियादी सुविधाओं से भी वंचित हैं। शहरों की सड़कों पर गड्ढे, सीवर प्रणाली का अभाव एवं जल-जमाव से होने वाली परेशानियां और बीमारियां, बिजली, पानी एवं संचार सुविधाओं का अस्त-व्यस्त व असमान वितरण इन बस्तियों को ज्यादा समस्यामूलक बना देता है। ऐसी बस्तियों के निवासी अनेक जटिल रोगों सहित कई प्रकार

की स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के शिकार होते हैं। शहरी क्षेत्रों में बढ़ती आबादी स्थानीय प्रशासन द्वारा बुनियादी सेवाएं प्रदान करने की क्षमता पर भारी दबाव डालती है। वैध-अवैध रूप से बसने वाली ये बस्तियां शहरों का अविभाज्य हिस्सा बन चुकी हैं। लेकिन हालत यह है कि इनमें रहने वाले लोगों को पेयजल, शौचालय और कचरे के निपटान जैसी बुनियादी सुविधाएं तक नहीं नसीब हैं।

आज देश में लगभग सात करोड़ लोग शहरी झुग्गी बस्तियों में रहते हैं, जहां न तो साफ पानी है, न सफाई और न अन्य बुनियादी सुविधाएं। इसके अलावा बड़ी संख्या में लोग पुलों के नीचे, सड़कों पर और जहां-तहां जीवनयापन को मजबूर हैं। वर्ष 2001 में अधिकतर बेघर परिवार ग्रामीण क्षेत्र में थे। लेकिन 2010 आते-आते बढ़ती शहरी बेघरों की संख्या गांवों के बेघरों से ज्यादा हो गई। इन बेघरों की सबसे बड़ी विडंबना तो यह है कि अपनी एक-दो बीघे की जमीन को गांवों में छोड़ कर ये खुले आकाश के नीचे या छोटी-छोटी झुग्गियों पांच-पांच लोगों के साथ गुजर-बसर करते हैं। शहरों में अमीरों और गरीबों के बीच आवासीय स्थितियों और सामाजिक हैसियत के बीच एक निर्मम विभाजन दिखने लगा है।

एक अन्य समस्या जो गरीबों के सामने आती है, वह है शहरों की तकनीक पर बढ़ती निर्भरता। शहर या स्मार्ट सिटी में पैर पसारती उन्नत तकनीक के सामने गांव से बड़ी संख्या में आए निम्न-कौशल वाले कारीगरों के लिए औपचारिक उद्योगों या आधुनिक सेवाओं में कोई जगह नहीं है। इसलिए ये बेगारी करने के लिए मजबूर हैं। सुदूर गांव के बेहतरीन हस्तशिल्प के कारीगर हमारे शहरों में रिक्शा चलाने को बाध्य हैं। भारत की वर्तमान शहरी प्रणाली में लगभग आठ हजार शहर शामिल हैं। कई शहरों और कस्बों को शहरी विकास के व्यापक विस्तार में शामिल किया जा रहा है। संयुक्त राष्ट्र का अनुमान है कि भविष्य में अधिकांश जनसंख्या वृद्धि शहरी क्षेत्रों से ही होगी। 2030 तक साढ़े सोलह करोड़ अतिरिक्त लोग शहरी क्षेत्रों की ओर रुख करेंगे।

अब जरा देश की राजधानी के हालात पर नजर डालें। दिल्ली में नौ सौ से ज्यादा छोटी-बड़ी झुग्गी बस्तियां हैं, जिनकी आबादी करीब बीस लाख है। यहां उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल, असम, छत्तीसगढ़ आदि राज्यों से लोग आकर बसे हैं। अधिकतर मलिन बस्तियों में साफ सफाई का कोई इंतजाम नहीं है। यहां शौचालय, सीवर लाइन, नालियां और कूड़े के निस्तारण की कोई व्यवस्था नहीं है। प्राथमिक शिक्षा के लिए इन बस्तियों में या उनके नजदीक स्कूल तो खोले गए हैं, लेकिन ये स्कूल भी सामाजिक भेदभाव, सरकारी उपेक्षा और अव्यवस्था का शिकार हैं। स्वच्छ भारत मिशन के बावजूद यहां पर कोई सीवर व्यवस्था नहीं है, जिस कारण से घरों में शौचालय नहीं बनाए जा सकते हैं। जहां पर शौचालय बने होते हैं, वहां मल-मूत्र व गंदा पानी नालियों में बहाया जाता है, जो वहीं के लोगों को बीमार बनाता है। इन बस्तियों के लोगों को इलाज के लिए नजदीक के स्वास्थ्य केंद्रों पर ही आश्रित रहना पड़ता है। दुर्भाग्य यह है कि इन बस्तियों को साफ रखने और एक बेहतर जिंदगी की तलाश में आए लोगों को सचमुच की बेहतर जिंदगी देने की कोई व्यवस्था सरकारी तंत्र के पास नहीं है।

जड़ता की दीवारें

वर्षा

दुनिया मेरे आगे

हमारे आसपास मौजूद कई ऐसी बातें हकीकत की शक्ल में हमसे सवाल पूछ रही होती हैं और या तो हम उनकी आदतन अनदेखी करते हैं या फिर खुद को कठघरे में देख कर उसका जवाब तलाशने की जरूरत नहीं समझते हैं। हम सब बराबर हैं, इंसान हैं और हमें किसी भी तरह का भेदभाव नहीं करना चाहिए- यह कहते और सुनते हुए सालों और दशकों गुजर गए, लेकिन आज भी अक्सर ऐसी घटनाएं सामने आती हैं जो हमारे सामने परोसे गए उपदेश को मुंह चिढ़ा जाती हैं। जाति की बुनियाद पर खड़े पूर्वाग्रह एक ऐसी ही बीमारी है, जिनकी वजह से हमारे समाज को सभ्य होने के दर्जे में देखना मुमकिन नहीं हो पाता है।

जब पहली बार मेरा दुराग्रह आधारित घृणा से साक्षात्कार हुआ था, तब मैं बहुत छोटी थी। मेरी दादी ने मुझे साफ-सफाई करने वाली लड़की को दोपहर में रोटी देने को कहा था। वह लड़की मुझसे कुछ साल बड़ी रही होगी। मैंने रोटी ले गई और उसके हाथ में टंगी टोकरी में रख दी। तुरंत दादी की कड़क आवाज कानों में गूंजी कि 'टोकरी को हाथ क्यों लगाया तूने!' मैं एकदम सहम गई। मैंने उस लड़की की तरफ देखा। उसकी आंखों में एक अजीब-सी मायूसी थी। एक क्षण पहले जो चेहरा खिला-खिला था, वह बुझ गया था। दादी की आवाज फिर से गूंजी, मुझे हाथ धोने की नसीहत के साथ।

वह दिन और क्षण आज भी मेरी आंखों में अक्सर ज्यों का त्यों घूम जाता है। वे कातर आंखें, जैसे आज भी सवाल करती हैं कि ऐसा क्यों है! और मैं अमूर्तन में ही जैसे उसे दिलासा देती हूं कि नहीं, अब ऐसा नहीं होगा... हम सब बदल देंगे! अब हमारे दादा-दादी वाली पीढ़ी खत्म हो चुकी है। लेकिन क्या हमारे लाख चाहने के बावजूद इस कसौटी पर सचमुच कुछ बड़ा बदलाव हो पा रहा है? बेहद अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि हम उस ओर नहीं बढ़ सके हैं। आज भी ऐसी घटनाएं सामने आ रही हैं, जिसमें किसी खास जाति की किसी लड़की को जाति के आधार पर संचालित बर्ताव से मायूस होना पड़ता है और ऐसी हर मायूसी हमारे सभ्य होने और इंसानियत पर एक तीखा सवाल उठा कर गुजर जाती है। गांवों और दूरदराज के इलाकों की तो दूर, दिल्ली और मुंबई जैसे शहर भी इस रोग से बुरी तरह ग्रस्त हैं। कुछ समय पहले मुंबई के एक अस्पताल में अनुसूचित जनजाति की एक लड़की डॉक्टर पायल तड़वी की खुदकुशी ने उन सवालों को और गहरा किया है। खबरों के मुताबिक पायल को उसकी कुछ वरिष्ठ सहयोगियों ने जाति और आरक्षण को आधार बना कर लगातार अपमानित किया था।

कुछ लोगों को ऐसी बातों पर विश्वास करना मुश्किल होता है। साथ ही उच्च कही जाने वाली जाति से आने वाले लोग अधिकतर आरक्षण और आरक्षण की सुविधा पाने वालों से हद दर्जे की नफरत करते हैं। उन्हें ऐसा लगता है कि आरक्षण उनके हकों पर डाका है। मैं उनके बीच कई बार अप्रिय स्थिति में पड़ जाती हूं, क्योंकि मुझे लगता है कि आरक्षण वैसे समूहों का अधिकार है, जिन्हें महज जाति की वजह से अवसरों से वंचित किया गया था। मेरे इस विचार की वजह से कुछ लोगों ने मुझे आरक्षण प्राप्त समूह की पृष्ठभूमि से मान लिया था। लेकिन जब उन्हें पता चला कि मैं आरक्षण के दायरे से बाहर हूं, फिर भी आरक्षण पर मेरा रुख उनके उलट है, तब वे मुझसे भी नफरत करने लगे।

उन लोगों की नफरत और अपने प्रति उनकी आंखों में छलकती हिकारत को देख कर यह महसूस कर पाती हूं कि पायल तड़वी या उनके जैसी तमाम लड़कियों या दलित-वंचित जातियों की पृष्ठभूमि वालों के साथ जब भेदभाव और तिरस्कार का बर्ताव होता होगा तो उनके भीतर क्या-क्या और किस तरह टूटता होगा! अपने ही साथ वालों की नजर में धिक्कार सहना, खुद को हर रोज छोटा महसूस करना इतना आसान तो नहीं होता किसी के भी लिए। जब से यह समझ में आया कि जातियों का जहर कितना बुरा है, तभी से उनके लिए दर्द महसूस होता है जो इस जहर की मार झेलने के लिए मजबूर हैं।

एक व्यक्ति और उनकी बातों से मैं काफी प्रभावित हो गई थी तो एक अन्य व्यक्ति ने उनकी जाति के बारे में बता कर मेरे भीतर उनके प्रति उपेक्षा भरने की कोशिश की। लेकिन मैंने कहा कि इससे क्या फर्क पड़ता है! आरक्षण का विरोध करने वालों से कहती हूं कि सदियों से हमारे पूर्वजों ने कमजोर जातियों का शोषण किया है... और अब जाकर उन्हें बराबरी का मौका मिला है तो हमें सहृदयता दिखानी चाहिए। इसके बाद भी उनका रुख नहीं बदलता। वे संविधान में दर्ज अधिकारों का तो कुछ कर नहीं पाते, तब घृणा के हथियार का इस्तेमाल करते हैं। ऐसी घृणा, जिसे झेलना हर किसी के लिए मुमकिन नहीं है। मैंने भी तय किया है कि मैं हार नहीं मानूंगी। मैं लगातार इस उम्मीद में काम करती हूं कि जातियों के बंधन टूट जाएं, हम सब बस इंसान बन जाएं। शायद एक दिन जाति की दीवार पिघल जाए!

चौपाल

संकट और सवाल

कांग्रेस का संकट, वैयक्तिक नहीं, वैचारिक है। ऐतिहासिक दो महान पराजयों के बावजूद अब भी कांग्रेस की जाजम, वैयक्तिक मनुहार में रत है, जबकि कांग्रेस का वास्तविक संकट वैयक्तिक है ही नहीं। इसीलिए सवाल उठता है कि क्या राहुल गांधी बतौर कांग्रेस अध्यक्ष सन 2024 का चुनाव जितवा पाएंगे। रायबरेली में पराजित और वायनाड में लोकप्रियता से नहीं, गणित से राहुल की जीत अपराजेय कांग्रेसियत तो नहीं है। सन 1985 के बाद वंशवाद से नियंत्रित कांग्रेस, समाजवाद, राष्ट्रवाद और भ्रष्टाचार उन्मूलन हेतु कितने कदम चली, कांग्रेस का शासन चला, किंतु कांग्रेसियत डूबती रही। मान भी लिया जाए कि राजीव गांधी को बोफर्स मामले में झूठा बदनाम किया गया था, किन्तु उनकी शेष कर्मठता उन्हें चुनाव क्यों नहीं जिता सकी? वीपी सिंह और उनकी विविध रूपधारी समाजवादी मंडलिया मंडल आयोग की सिफारिशों के बावजूद डूब गईं। हास्यास्पद है कि आरक्षण के जातीय फार्मूलों से राजनीति करने वाले पूर्व के कांग्रेसहंताओ के बल पर कांग्रेस प्रधानमंत्री का पद चाहती थी। आरक्षण मूलतः वोट बैंक बनाने का सूत्र है, यह मतदाता समझ गया है। कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी रहें या प्रियंका गांधी वाड्रा, अब मतदाता फोटो के नीचे लिखी कर्म कहानी पढ़ कर वोट देता है।

अरविंद पुरोहित, अलकापुरी, रतलाम

जनप्रतिनिधियों का आचरण

निर्वाचित नेताओं को कम से कम यह मालूम होना चाहिए की उनके संसदीय क्षेत्र की समस्याएं क्या हैं, किस समस्या को प्रमुखता से उठाना है, जिस आम आदमी ने संसद तक पहुंचाया है और जो जिम्मेदारी दी है, उसका निर्वहन कैसे करना चाहिए, समस्याओं की प्राथमिकता क्या हो, संबंधित विभाग के अफसर से किस तरह से बात कक समाधान निकाला जाए आदि। लेकिन व्यवहार में ऐसा देखने में आता नहीं है। विभागीय अधिकारियों से जनप्रतिनिधियों और राजनेताओं के उलझने की कई घटनाएं आम बात हैं। अधिकारियों के साथ बैठकों के दौरान अपशब्दों का प्रयोग, धमकियां और मारपीट जैसी घटनाएं बताती हैं कि हमारे जनप्रतिनिधि किस तरह की कार्य-संस्कृति को बढ़ावा दे रहे हैं। नवनिर्वाचित सांसदों को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी सदाचरण की नसीहत दे चुके हैं। आम चुनाव में भी राजनेताओं ने जिस भाषा का उपयोग किया, उसकी बेशर्मी किसी से छिपी नहीं है। अब जरूरत तो इस बात की है कि केंद्र सरकार जनप्रतिनिधियों के लिए एक अलग आयोग गठित करे जो राजनेताओं के आचरण पर विशेष निगरानी रखे। कौन नेता कहां, कब और क्या बोलते हैं। सदाचार के रास्ते पर चल कर ही राजनीति को साफ-सुथरा बनाया जा सकता है।

● रितेश कुमार उपाध्याय, संत कबीर नगर

कौशल और रोजगार

विश्व बैंक की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि 2030 तक दुनिया के 19 विकसित और विकासशील देशों में साढ़े आठ करोड़ से ज्यादा कुशल श्रमशक्ति की कमी होगी। जबकि अकेले भारत के पास 2030 तक जरूरत से ज्यादा कुशल कामगार होंगे। भारत के लिए यह आर्थिक कमाई का प्रभावी साधन सिद्ध हो सकता है। उच्च कौशल प्रशिक्षित भारत की नई पीढ़ी को देश और दुनिया में अपार मौके मिलने की संभावना रहेगी। निश्चित रूप से उच्च शिक्षा और कौशल विकास पर उपयुक्त ध्यान देकर रोजगार की चुनौतियों के बीच रोजगार की नई संभावनाओं को साकार किया जा सकेगा। युवाओं की संख्या को देखते हुए हर साल 81 लाख नई नौकरियां और नए रोजगार अवसर पैदा करने की जरूरत है। इतने रोजगार सृजन के लिए शिक्षण-प्रशिक्षण की गुणवत्ता में सुधार और सार्वजनिक व निजी निवेश में भारी वृद्धि करनी होगी। विनिर्माण क्षेत्र को गतिशील करना होगा, निर्यात बढ़ाने होंगे और श्रम कौशल बढ़ाना होगा।

● अजीत कुमार गौतम, गोरखपुर

चौंकाने वाली तस्वीर

हाल में जारी एक सरकारी रपट में भारत में श्रमिकों की स्थिति के बारे में एक कठोर तस्वीर उभर कर आई है, जिसमें उनके न्यूनतम वेतन के लिए स्वीकृत मानदंडों से आधे से भी कम आय दर्ज की गई है। चौंकाने वाला तथ्य तो यह है कि इकहत्तर प्रतिशत श्रमिकों के पास कोई भी लिखित नौकरी अनुबंध नहीं है, चौवन प्रतिशत को छुट्टियों के पैसे का भुगतान नहीं मिलता है और ग्रामीण क्षेत्रों में सत्तावन प्रतिशत और शहरी क्षेत्रों में लगभग अस्सी प्रतिशत श्रमिक आठ घंटे के कार्य दिवस (48 घंटे प्रति सप्ताह) से बहुत अधिक काम करते हैं। रिपोर्ट के मुताबिक बावन प्रतिशत से अधिक श्रमिक वास्तव में स्व-रोजगार से जुड़े हैं। यानी वे बड़े पैमाने पर खेती या छोटी दुकानें चला रहे हैं या फिर ऐसे उपक्रम जो उनके खुद के श्रम पर आधारित हैं, या विभिन्न प्रकार के सेवा प्रदाताओं के रूप में काम कर रहे हैं। लगभग एक चौथाई कामकाजी लोग दैनिक आधार पर काम पाते हैं और रोजाना मजदूरी कमाते हैं, जबकि लगभग एक चौथाई नियमित वेतन या वेतन-कमाने वाले कर्मचारी हैं। आवधिक श्रम बल सर्वेक्षण (पीएलएफएस) नामक रिपोर्ट, राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन (एनएसएसओ) द्वारा किए गए लगभग एक लाख घरों (4.33 लाख व्यक्तियों) के सर्वेक्षण पर आधारित है।

● प्रियंबदा, गोरखपुर

शिक्षकों की कमी

बिहार के सरकारी स्कूलों में शिक्षकों की घोर कमी है, जिससे बच्चों का पठन-पाठन सुचारू ढंग से नहीं हो पाता है। दूसरी ओर, बेरोजगारी से जूझ रहे टीईटी, एसटीईटी उत्तीर्ण अभ्यर्थी अपनी शीघ्र बहाली को लेकर आंदोलन कर रहे हैं। बिहार सरकार उनकी मांगों को नजरअंदाज करते हुए तरह-तरह के बहाने बना रही है। कभी सुप्रीम कोर्ट में लंबित 'समान काम के लिए समान वेतन' के मुद्दे को बहाली की राह में अड़चन बताया, तो कभी आम चुनाव के कारण आचार संहिता की दुहाई दी गई। अब जबकि दोनों मामले साफ हो गए हैं तो फिर टाल मटोल क्यों? गत दिनों धरना-प्रदर्शन कर रहे आंदोलनकारी अभ्यर्थियों पर बर्बरतापूर्वक लाठीचार्ज किया गया, महिलाओं तक को नहीं बख्शा गया। बिहार सरकार को यथाशीघ्र शिक्षकों की बहाली करनी चाहिए। एक ओर शिक्षित बेरोजगारों में निराशा बढ़ रही है, वहीं सरकारी स्कूलों में अधिकांशतः आर्थिक रूप से पिछड़े समाज के बच्चे ही तालीम पाते हैं।

● मंजर आलम, रामपुर डेहरू, मधेपुरा

किसी भी मुद्दे या लेख पर अपनी राय हमें भेजें। हमारा पता है : ए-8, सेक्टर-7, नोएडा 201301, जिला : गौतमबुद्धनगर, उत्तर प्रदेश

आप चाहें तो अपनी बात ईमेल के जरिए भी हम तक पहुंचा सकते हैं। आइडी है : chaupal.jansatta@expressindia.com